मनुष्य बनो

91/1986

तम्बर वा० मू०
१९८६ १०.००

शरणागति

शुभ संकल्प,

क्षमा,

प्रेम,

निष्काम कर्म,

ब्रह्मचर्य पालन,

संरक्षक
दयाल फकीरचन्दजी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर (पंजाब)

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न-छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिये जवाबीकार्ड आना चाहिए वी० पी०पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायेगी। इसका वार्षिक मूल्य १५.०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर न मिले व अगला अंक निकलने के एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिए। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी।

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदं: पूर्णात्पूर्णमदुच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ३७	सितम्बर १९८९	अङ्क १२

ज्ञान विचार

सब जगह रहता हूं और सब में मेरा स्थान है।
देख लेता हूं मुझे वह, जिसमें मेरा ज्ञान है ॥१॥

आंख वाले देखते हैं, रूप मेरा सब जगह।
वह समझ लेते हैं जिनमें, समझ का अनुमान है ॥२॥

काम करता हूं सभी, निष्काम मेरा काम है।
मुझमें ज्ञान अनुराग है अरु मुझ ही में परमाण है ॥३॥

मुझमें सृष्टि स्थिति और, लय के सब प्रबन्ध हैं।
नाम जो लेते हैं मेरा, उनको पद निर्वाण है ॥४॥

राधास्वामी नाम लेकर, राधास्वामी धाम लो।
लोक यश परलोक आनन्द,का जो तुमको ध्यान है ॥५॥

परम सन्त सद्गुरु हिज होलीनेस हुजूर मानव दयाल
डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज का

दशहरा-सत्संग--दौरा--कार्यक्रम

तिथि	समय	स्थान
४-१०-८९	प्रातः ७ बजे से	होशियारपुर से प्रस्थान
५-१०-८९	मेरठ पहुंच	श्री धर्मेन्द्र सिंह बी-१, आदर्शनगर मेरठ ।
	सत्संग प्रातः ८.३० बजे से	श्री ब्रह्म सिंह
	सत्संग सायं ६.०० बजे से	सी-४८, डिफेन्स कालौनी, मवाना रोड, मेरठ ।
६-१०-८९	प्रातः गृह प्रवेश	श्री सुरेन्द्रपाल त्यागी "मानव कुटीर" नं. ३३९, फूल बाग कालौनी, मेरठ ।
६-१०-८९	सत्सँग सायं ५.०० बजे से	श्री एस०डी० शर्मा
७-१०-८९	सत्संग प्रातः ८.०० बजे से	प्रवक्ता क्वार्टर नं
	सत्संग सायं ५.०० बजे से	२, टीचर्स कालोनी मोदी नगर, बस स्टेण्ड के निकट ।
८-१०-८९	प्रातः दिल्ली को प्रस्थान ।	

९-१०-८९	सत्संग प्रातः ८.०० बजे से	दशहरा फकीर
	,, सायं ४.३० बजे से	सत्संग सम्मेलन
१०-१०-८९	,, प्रातः८.०० बजे से	सलवान पल्लिक स्कूल ओल्ड राजेंद्र-नगर, नई दिल्ली ।

(आने का कार्यक्रम बाद में प्रकाशित होगा)

सत्संगियों के ठहरने और भोजन की व्यवस्था "अन्तर्राष्ट्रीय मानवता सोसाइटी, दिल्ली की ओर से होगी । कृपया बिस्तर अवश्य साथ लायें ।

:०:—

धन्यवाद

श्रीमती मीरा बहिन ने रावतपुर, अंगू एवं जसरा के सत्संगों में प्राप्त धनराशि १३०) 'मनुष्य बनो' की सहायतार्थ भेजी है । हम आप* अत्तन्त आभारी हैं जो 'मनुष्य बनो' के संचालन में निरन्तर हमारा हाथ बटा रही हैं और मालिक से उनकी मंगल कामना करते हैं ।

सूचना

कागज में निरन्तर वृद्धि के कारण अक्टूबर १९८९ से पत्रिका का वार्षिक मूल्य २०) प्रति वर्ष कर दिया गया है । पाठक नोट कर लें और आगे से अपना वार्षिक मूल्य २०/- ही भेजें ।

— व्यवस्थापक

—:०—

R. S.

राधास्वामी नाम ध्वनि

राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ॥
अलख अगम और अनामी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ॥

परम सन्त का रुप धरा, जीवों पर उपकार किया।
सीधा सच्चा मार्ग दिया, आये धर पद स्वामी।
राधास्वामी··· ॥

बन कर आये परम फकीर, हरने सब जीवों की पीर
परम दयालु, दानी वीर, नाम दान के दानी।
राधास्वामी··· ॥

राम भी हो और कृष्ण भी तुम।
तुम महावीर और बुद्ध गौतम।
अक्षर ब्रह्म और पुरुषोत्तम, सब नामों में अनामी।
राधास्वामी··· ॥

मानवता का किया प्रचार. निज अनुभव का दे दिया सार
ऐसे गुरु को बारम्बार नमामि नमामि नमामि।
राधास्वामी···

दातादयाल के प्यारे तुम, मानव के रखवारे तुम।
निर्गुण और सगुण भी तुम, सब के अन्तर्यामी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ॥

—:०:—

मासिक सन्देश

(परम सन्त परम मानव हजूर मानव दयाल

डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज !)

मेरे परम प्रिय सत्संगियों !

राधास्वामी !

परमदयाल जी सहाई !

अगस्त के मासिक सन्देश में सन्तमत की दृष्टि से कर्म सिद्धान्त की चर्चा करते हुए कबीर साहब के उच्चकोटि के अनुभव का हवाला दिया गया था और नीचे दिये गये शब्दों को प्रस्तुत किया गया था।

जाप मरे अजपा मरे अनहद भी मर जाये।
सुरत समानी शब्द में, बाको काल न खाये ।।

इस दोहे में ऋषि परम्परा, वेद, उपनिषद, वेदान्त, भगवद्गीता और षटदर्शनों में मोक्ष पद की दी गई धारणा को बहुत ही सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है। उसका कारण यह है कि कबीर साहब ने उपनिषद काल के ऋषियों

की भाँति पहले परमतत्व का अनुभव किया और फिर उसे भाषा में व्यक्त किया। अनुभवी महापुरुषों की भाषा किसी देश और काल से सीमित नहीं होती, उनकी वाणी, भूत, वर्तमान और भविष्य के लिये सर्वदा सत्य प्रमाणित होती है। यही वाणी आगे चलकर धार्मिक साहित्य एवं वाङ्मय बन जाता हैं। वेद वाणी को इसलिये शाश्वत माना गया है क्यों कि उसमें अभिव्यक्त की गई सच्चाई, अनादि, अनन्त और ध्रुव है। वह समय के परिवर्तन से प्रभावित नहीं होती, इस लिये ही उसे वेद कहा जाता है।

'वेद' शब्द के दो अर्थ हैं इसका एक अर्थ-वह वैदिक साहित्य है जिसमें शाश्वत सत्यों की चर्चा की गई है। यह साहित्य बहुत विपुल है। इसमें वैदिक संहिता, ब्राह्मण उपनिषद तथा वेदान्त एव भगवद् गीता को भी शामिल किया जा सकता है वेद शब्द का दूसरा अर्थ-वेद तत्व एवं वे ध्रुव सत्य है जो अनादि अनन्त और शाश्वत है। जब वेद को 'अपौरुषेय' कहा जाता है उसका अर्थ ये नहीं होता कि वैदिकसाहित्य मानवीय सीमाओं से परे है। उसका अथ ये होता है कि वे वेद तत्व शाश्वत हैं और देशकाल से परे हैं, जिनकी अभिव्यक्ति वैदिक साहित्य और वाँङ्मय में की गई है। दूसरे धर्मो में अन्ध विश्वास के आधार पर यह स्वीकार किया जाता है कि जो कुछ एन्जील (बाईबिल) कुरानशरीफ या किसी अन्य सम्प्रदाय के धार्मिक साहित्य में लिखा गया है वह मनुष्य ने नहीं लिखा बल्कि ईश्वर ने अपने ही मुख से या वाणी से धर्म स्थापकों और पैगम्बरों को सुनाया है। वास्तविकता तो यह परमतत्व आधार ने मनुष्य के चोले में जन्म लेकर दिक में रहते हुए जिन शाश्वत सत्यों का व परमतत्व के

विभिन्न रूपों का अनुभव किया है, वे ही वेद हैं, अपौरुषेय हैं और ध्रुव सत्य है। इस सच्चाई का प्रमाण यह होता है कि जब किसी सत्पुरुष द्वारा वाणी में अभिव्यक्त उन सत्यों का मनन किया जाता है तो उस समय वे मनुष्य की आत्मा के अन्दर प्रविष्ट कर जाते हैं और उन्हें पढ़ने वाला या सुनने वाला व्यक्ति उन सत्यों का अनुभव करने लगता है।

सन्तों की, ऋषियों की और सत् पुरुषों की ये वाणी हर समय में यथार्थ होने के कारण देश काल के परिवर्तनों से अछूती रह जाती है। और उनकी सत्यता ज्यों की त्यों बनी रह जाती है, इसलिये यह कह दिया जाता है—

'सन्त वचन पलटे नहीं, पलटे सब संसार।'

आम लोग इस वाक्य को गलत समझते हैं। उनकी यह धारणा होती है कि सन्त जो कुछ कह देता है वह हमेशा के लिये सत्य प्रमाणित होता है। यहाँ पर सन्त वचन का अर्थ सन्त की अनुभव पर आधारित वह वाणी है जिसमें वह शाश्वत सत्य को इस प्रकार से प्रस्तुत करता है कि पढ़ने वाले को हर काल और हरअवस्था में वे सत्य यथार्थ होने के कारण नई रोशनी और नया प्रकाश देते हैं ऐसी वाणी को जितनी बार भी पढ़ा जाये, वह उतनी बार रोचक और यथार्थ प्रमाणित होती है। कबीर साहब की ऊपर दी गई वाणी ऐसी ही शाश्वत वाणी है। सुन्दरता ये है कि वह ऐसी सरल भाषा में प्रस्तुत की गई है कि उसे साधारण व्यक्ति भी समझ सकता है गूढ़ चिन्तन और विवेक के साथ इस वाणी को पढ़ने से ये स्पष्ट हो जाता है कि कबीर साहब ने उनके जन्म से पहले की सभी योग युक्तियों के सार को इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि

गागर में सागर भर दिया है। यहाँ पर जाप का अर्थ वह सुमिरन या मालिक के रटन का नाम है जो भक्त को भाव समाधि में ले जा सकता है। कीर्तन, भजन आदि भी मनुष्य को आध्यात्मिक अनुभव दे सकते हैं। किन्तु यह अनुभव अधूरे होते हैं। बार-बार राम-राम अथवा कृष्ण-कृष्ण जपने से या स्तोतों के गाने से मनुष्य को कर्मो से छुटकारा नहीं मिल सकता। वह दिक् देश काल से ऊपर नहीं उठ सकता। इसी लिये आध्यात्मिक अनुभव की अन्तिम सीढ़ी में ये जाप काम नहीं देता क्योंकि वहाँ पर साधक दिक देश काल से तथा माया और कर्म से ऊपर उठ जाता है।

इसलिये कबीर साहब ने ऊपर दिये गये शब्द में कहा है कि जाप की सीमा से परे जानाआवश्यक है न ही केवल इतना बल्कि मालिक के नाम का मानसिक जाप भी अन्तिम सीढ़ी तक नहीं पहुँचाता। इसे अजपा जाप कहा जाता है। अजपा-जाप जोर-जोर से नाम सुमिरन करने के मुकाबले में और भजन-कीर्तन के मुकाबले में अधिक लाभदायक होता है। मौखिक जाप और कीर्तन से भाव समाधि तो लग जाती है किन्तु आन्तरिक अनुभव नहीं होता और सिद्धि शक्ति की प्राप्ति भी नहीं होती है। अजपाजाप करने से इष्ट का आन्तरिक दर्शन हो जाता है और जाप करने वाले व्यक्ति को चमत्कारी अनुभवों के साथ-साथ कई प्रकार की सिद्धियाँ भी प्राप्त हो जाती हैं। अनहद नाद का अनुभव अजपाजाप से ऊंचा होता है। अजपाजाप गुरू के ध्यान में बदल जाता है। अनहद नाद का अर्थ अपने अन्तर के शब्द को सुनना है। इसे सुरत शब्द भी कहा जाता है। अन्तर के शब्द को सुनने में आनन्द प्राप्त होता है और सुरत ऊपर की ओर खिचती है।

इससे साधक अन्तरमुखी हो जाता है और अन्त में वह अशब्द गति में चला जाता है, जहाँ उसे परम शक्ति का अनुभव होता है। उसकी शरीर की मैं मन की मैं और आत्मा की मैं समाप्त हो जाती है। इस अवस्था में साधक काल कर्म और माया से ऊपर उठ जाता है। कबीर साहब ने नीचे के सारे अनुभवों को केवल सीढ़ियाँ ही बताया है। अशब्द गति में इष्ट का जो अनुभव होता है वह हर प्रकार के रंग रूप से परे होता है। शब्द को इस ऊंचो अवस्था पर रहने वाला साधक देवी-देवताओं का विरोध न करता हुआ परमतत्व को सर्वाधार मानता है। वास्तव में अनेक देवतावाद न तो वैदिक विचार-धारा पर आधारित है न वह वेदान्त के दर्शन से मेल खाता है मालिक को निर्गुण मानने का अथ यह नहीं है कि वह शून्य है। उसका आशय ये है कि देवी-देवताओं की जितनी अभिव्यक्तियाँ हैं वे सब एक ही परमतत्व के अनेक रूप हैं। इसी प्रकार अवतारों के रूप भिन्न-भिन्न हैं और उनकी जीवन लीलाऐं विशेष कर्मों को भोगने के नमूने हैं। किन्तु जो परम तत्व विभिन्न अवतारों का रूप धारण करता है, वह अविनासी और एक रस है। कबीर साहब ने सनातन धर्म की इस सच्चाई को अपने अनुभव के आधार पर अनेक शब्दों में प्रस्तुत किया है। उनके ऐसे शब्द भेदभाव को मिटाने और सर्वाधार परम तत्व को प्राप्त कराने के उद्देश्य से लिखे गये हैं।

पहली दृष्टि से ऐसा लगता है कि इन शब्दों में सनातन धर्म का खण्डन है। किन्तु यह धारणा भ्रमात्मक है। कबीर साहब की खण्डन शैली वास्तव में मन्डन शैली है। इस चर्चा को अगले मासिक सन्देश में जारी रखेंगे और कबीर साहब का

अवतार भगवान कृष्ण के अवतार की भाँति सनातन धर्म को स्थापित करने के लियेऔर उसके सच्चे शाश्वत स्वरूप को प्रस्तुत करने के लिये ही हुआ।

जहाँ तक जून के महीने की गतिविधियों और सत्संग के दोरे का सम्बन्ध है, मैं आपको यह बता देना चाहता हूं कि जबरदस्त गर्मी के बावजूद भी मानवता मन्दिर में दैनिक और साप्ताहिक सत्संगों में अधिक से अधिक सत्संगी सम्मिलित होते रहे हैं। मैंने आपको बताया था कि मैंने विलारी वालों को वचन दिया था कि पहली जौलाई को मैं वहाँ पर सत्संग देने जाऊँगा। इस दृष्टि से हमें २८ जून को देहली और मुरावाबाद के लिये रवाना होना था। किन्तु हम २७ जून को ही प्रातःकाल देहली के लिये रवाना हो गये।

२७ रात्रि को भी दहली के बहुत से सत्संगी पहले से ही श्री के० पी० वर्मा के निवास स्थान पर एकत्रित हो चुके थे। देहली के सत्संगी २८ और २९ जून को भी लगातार मिलने के लिये आते रहे। मुझे इस स्थान पर देहली के सत्संगियों के बारे में चर्चा करने की प्रेरणा हो रही है। १९८२ से ही देहली के सत्संगियों की यह प्रबल इच्छा रही है कि मैं अधिक से अधिक समय राजधानी में सत्संग दिया करूं। जब मैंने १९८२ के दशहरे के सत्र सम्मेलन में पहली बार सत्संग दिया तो सभी ने मुक्त कंठ से यही कहा कि मैं नहीं बल्कि परम-दयाल जी महाराज मेरे माध्यम से सत्संग दे रहे थे। १९८३-८४ में देहली सत्संगियों की उत्कण्ठा मेरे सत्संगों को सुनने के लिये बढ़ती ही गई। १९८५ में तो मेरे हर एक सत्संग हर देहली और आस पास के सत्संगियों की संख्या हजारों तक हो

गई । इसलिये हर वर्ष केवल दशहरे पर नहीं बल्कि दूसरे अवसरों पर देहली में कम से कम ६ सत्संग आयोजित हो ही जाते हैं । इसका कारण यह है कि देहली के सत्संगी परम-दयाल जी महाराज के प्रति अगाध श्रद्धा रखते हैं और मुझे फकीरमय होने के नाते परमदयाल जी से पृथक नहीं मानते । उनकी अगाध श्रद्धा तथा भक्ति का मिसाल नहीं ।

मेरे प्यारे ! सन्तमत की परम्परा में गुरू को परमतत्व स्वीकार किया जाता है और परम तत्व अविनाशी है । यद्यपि यह अविनासी आँशिक रूप में हर जीव के अन्दर मौजुद है । शुद्ध, बुद्ध अमल- विमल और परम सुखराशि है, तथापि इस गुप्त साक्षी भाव को जगाने के लिये परमतत्व स्वयं मनुष्य के रूप में गुरू बनकर आता है । गुरू वही है जो अनामीधाम से सीधा पृथ्वी पर अवतरित होता है । वह वास्तव में न जन्मता है न मरता है । वह तो प्रगट होता है और अपने लक्ष्य एवं कर्त्तव्य को पूरा करने के बाद पुनः परमधाम को चला जाता है किन्तु इस प्रकार अपनी लीला समाप्त करने से पहले ही वह किसी ऐसे पुरुष को कार्यभार सोंप जाता है, जिसके अन्दर सद्गुरू तत्व निखर सकता है । राधास्वामी परम्परा में इस लिये जीवित गुरू को मुख्य माना गया है । सद्गुरू की भक्ति नाम की भक्ति कहलाती है । दूसरे शब्दों में सद्गुरु को व्यक्ति मात्र शारीरिक रूप न मानकर उसके अविनाशी परम-तत्व से प्रेम करते हुए उसे साक्षात दयालु पुरुष माना जाता है । उसी के रूप में पहले सद्गुरु से सारे गुण समाहित होते हैं । जब पहला गुरू चोला छोड़ देता है तो उसकी शारीरिक अनुपस्थिति खलती नहीं है । उसके उत्तराधिकारी का शारीरिक, मानसिक और आत्मिक व्यक्तित्व पहले गुरू का स्थान

ले लेता हैं किन्तु सत्संगी का स्वच्छ प्रेम उत्तराधिकारी के अविनाशी तत्व से ज्यों का त्यों बना रहता है। इसलिये राधा स्वामी मत में भक्ति को व्यक्ति की भक्ति नही बल्कि नाम की भक्ति कहा गया है। यहाँ नाम का अर्थ परब्रह्म से परे शब्द ब्रह्म एवं अगम की धारा है। यह अगम की धारा जीवित गुरू की वाणी से विनिसृत होती है। इसलिये सत्संगी दिवंगत गुरू की अनुपस्थि त में भी उसी शब्द ब्रह्म एव अगम शब्द की धारा का उत्तराधिकारी की वाणी में अनुभव करता है। जो लोग इस भ्रांति में पड़े रहते हैं कि उनके दिवंगत गुरू का रूप ही उनकी सहा:ता करता है, वे चौथे पद को प्राप्त नहीं कर सकते। वे अज्ञानी हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि दिवंगत गुरु के रूप पर ध्यान लगाने से सत्सगियों के दुनियावी कारोवार सफल हो जाते हैं उनकी इच्छायें भी पूरी हो जाती हैं और उन्हें चमत्कारी अनुभव भी होते रहते हैं। उनको यह अनुभव तो उस समय भी हो सकते हैं जब वे किसी देवी देवता या पत्थर की मुर्ति में विश्वास रखते हों। जीवित गुरु को पहले गुरू से अलग मानकर दिवं-गत गुरू के स्थूल या सूक्ष्म रूप में आसक्ति रखने वाले सत्संगी किसी हालत में भी उस नाम को प्राप्त नहीं कर सकते जो चौथे पद में रहता है। यही कारण है कि राधास्वामी मत के अनुसार जोरदार शब्दों मैं कहा जाता है: –

"नाम रहे गुरू के आधीना।"

इसका मुख्य कारण यह है कि जब तक सभी शंकाओं का निवारण न हो जाये तब तक साधक त्रिगुणात्मक जगत से निकल कर दयाल देश में नहीं जा सकता। यदि दिवंगत गुरू

के सत्संगो से शंकायें दूर नहीं हुई और विशेषकर देह को गुरू मानते हुए सद्गुरू के निजरूप से अनभिज्ञ रहते हुए नाम की भक्ति के स्थान पर स्थूल रूप की भक्ति की जाती है तो विदेह मुक्ति तो क्या जीवन मुक्ति का भी अनुभव नहीं हो सकता। जीवित गुरू के सत्संगों में शंकाओं का निवारण कराने के साथ-साथ उसके निज स्वरूप से अटूट सम्बन्ध स्थापित हो जाने से सत्संगो और सद्गुरु एक-दूसरे में ओत-प्रोत हो जाते हैं मैं समझता हूं कि मेरे प्यारे देहली के आस पास के इलाकों के सत्संगी धीरे-धीरे नाम की भक्ति के भेद को समझ रहे हैं। और चौथे पद की ओर बढ रहे हैं। मैं यह सब कुछ इसलिये लिख रहा हूँ क्योंकि मैंने पिछले पांच वर्षो से सत्संग देते समय देहली की संगत को बहत निकट से देखा है। मुझे यह कहते हुए हर्ष का अनुभव होरहा है कि देहली के सत्संगों में हजारों सत्संगी कई बार समाधिस्त अवस्था में मग्न हो जाते हैं मैंने इस तथ्य को कई बार मासिक सन्देशों में व्यक्त किया है। यही कारण है कि सत्संग देते समय मुझे स्वयं पता नहीं चलता कि मैं क्या कह रहा हूं। उस समय एक ऐसी उन्मुक्त अवस्था वाली हो जाती हैं जिसमें से निकलने के बाद ऐसे लगता है कि मैं अपने आपको सत्संग दे रहा हूँ।

इस सम्बन्ध में उचित स्थान पर आपसे फिर बातचीत होगी। जहाँ तक २७ जुलाई के दौरे का सम्बन्ध है, मैं आपको बता रहा था कि मुझे पहली जुलाई के लिये बिलारी जाना था। ३० जून को हम प्रातःकाल देहली से रवाना होकर हापुड़ के रास्ते से सायंकाल तक मुरादाबाद पहुंचे। हमने दोपहर का भोजन हापुड़ में श्री सत्यपाल कहेर के निवास-स्थान पर किया। श्री सत्यपाल के बड़े सुपुत्र श्री रमन की

पत्नी श्रीमती नीरू हमारे प्रियतम सत्संगी बटाला के श्री राम प्रताप जी की सुपुत्री है। इसलिये हमें थोड़े समय के लिये रुकना पड़ा और हमने वहाँ भोजन खाया।

हम सायंकाल ६ बजे के करीब बिलारी के निकट राजा का सहसपुर में पहुँचे। रात्रि का विश्राम करने के पश्चात मानवता मन्दिर बिलारी में पहली जुलाई १९८९ को प्रातः काल ८ बजे से ११ बजे तक सत्संग हुआ। इस सत्संग में बिलारी के सत्संगी बहुत बड़ी सख्या में सम्मिलित हुए। उसी दिन सायंकाल भी सत्संग आयोजित हुआ। पहली जुलाई रात्रि का विश्राम बिलारी में किया गया २ जुलाई प्रातःकाल बहुत उत्कृष्ट सत्सग हुआ जिसमें आचार्य शब्दानन्द, आचार्य के० पी० वर्मा, आचार्य कप्तान लालचन्द्र ने उत्कृष्ट कोटि के सत्संग दिये। ऐसे लगता था कि एक सन्त सम्मेलन आयोजित हो गया। इस सत्संग के पश्चात दोपहर के भोजन से निवृत्त होकर हम देहली के लिये रवाना हो गये।

जब हम उसी रात्रि को राजपुर रोड पहुचे, तो वहाँ श्री रवि पण्डित मौजूद थे। मेरा प्यारा बेटा रवि,श्रीमती निर्मला पण्डित आचार्या बोम्बे का सुपुत्र है। इस समय वह आबू-ढाबी में बैंक मैनेजर की हैसियत से काम कर रहा हैं। उसने कुछ महीनों पहले ही लिख दिया था कि १० जुलाई को उस का विवाह श्र नगर में होना निश्चित हो चुका। मैंने और भाग्यमाता जी ने उस विवाह में सम्मिलित होने का स्वीकृति दे दी थी। रवि पंडित क सभी सम्बन्धी और माता-पिता ५५ जून को ही श्रीनगर पहुँच चुक थे किन्तु रवि ने निश्चय किया कि वह हमारे साथ ही श्रीनगर जायेगा। इस ब चे का अगाध प्रेम और अटल विश्वास है वह मानवता के उसूलों पर दृढ़ता से चलता है उसको यह कोशिश रहती है कि अधिक से

अधिक समय तक वह मेरे निकट रहे। इसलिये वह ३ जुलाई को प्रातःकाल हमारें साथ देहली से रवाना होकर, सायंकाल करीब ६ बजे मानवता मन्दिर पहुंचा।

दो दिन मानवता मन्दिर में दैनिक सत्संगों और सत्-संगियों को व्यक्तिगत परामर्श देने के बाद हम ६ जुलाई को करीब १२ बजे दोहहर मैटाडोर से जम्मू क लिये रवाना हो गये, क्य कि हमें १ जुलाई को प्रातःकाल ६ बजकर ५५ मिनट पर हवाई जहाज के द्वारा जम्मू से श्रोनगर प्रस्थान करना था

यद्यपि जम्बू से कश्मीर सड़क द्वारा जाने से कश्मीर की घाटी के सुन्दर दृश्य दृटिगोचर होते हैं तथापि समय के अभाव के कारण हमने हवाई जहाज द्वारा जाना ही निश्चित किया था। जम्बू में हमें मेरे एक पुराने शिष्य रामप्रकाश के घर जाना था। श्री रामप्रकाश कश्मीर में आई० सी० पुलिस के पद पर काम करते है और इनका हैड क्वाटर जम्बू में है। जब हम इनक निवास स्थान पर पहुंचे तो पता चला कि वह सर-यारी कार्य से एक घण्टा पहले श्रीनगर को रवाना हो चुके थे। उनकी सुयोग्या पत्नी श्रीमती शैलजा ने हमारा स्वागत किया और हमारे भोजन तथा निवास का अपने घर पर सुचारू प्रब-न्ध किया। ७ जुलाई प्रातःकाल हम जम्मू के हवाई अड्डे से ठींक समय पर हवाई जहाज से श्रीनगर को रवाना हो गये। हमने अपने प्रिय मैंटाडोर के संचालक हरिवंश लाल शर्मा को व मेटाडोर को श्री रामप्रकाश के मकान पर छोड़ दिया।

इस मासिक सन्देश में यहाँ तक कि दौरे की सूचना पर्याप्त है मैं आप सबको सद्भावना और हार्दिक आशीर्वाद देता हूं कि आप स्वस्थ, सुखी और प्रसन्न रहें।

सबको राधास्वामी

आपका फ़कीरमय मानव

गताँक से आगे

राधास्वामी नाम सुरत और शब्द की एक ही सिफ्त है जैसे समुद्र और उसकी लहरें और शब्द और उसकी धुनि, प्रेमी व प्रीतम। इन सबका मतलब एक ही है।

राधास्वामी नाम की असलियत का पता पहिले दे दिया गया है। यदि वह अपूर्ण समझा जाय तो हम अपने ढंग पर ये उत्तर देते हैं मानना या न मानना यह जीवों के अधिकार की बात है। किसी के साथ कठोरता, वाद-विवाद या हठ करने की न आवश्यकता है और न उससे कोई लाभ है जो असलियत और आत्म ज्ञान के सच्चे जिज्ञासू होंगे वह खोज और पूछताछ के बाद जब कहीं सन्तुष्टता का सामान नहीं पावेंगे, इस ओर झुकेंगे। जिनको अधिकार नहीं है अथवा जो इसकी आवश्यकता प्रतीत नहीं करते, उनसे कहना सुनना व्यर्थ है। हमने जिस प्रकार इस नाम पर अपने निश्चय को दृढ़ किया है केवल उसी के विषय पर कहना चाहते हैं।

(१) नाम वह है जो हमको गुरु से मिलता है। इसलिये गुरू ही का प्रदान किया हुआ नाम हमारे लाभ की वस्तु है। यों तो सहस्रों कृत्रिम नामों से ग्रन्थ भरे पड़े हैं। यदि पुस्तकीय नाम से सम्बन्ध रखना था तो गुरू से पूछने की आवश्यकता क्या है।

(२) हमने गुरू को सत स्वरूप (जाते हकीकत) मान लिया है, इसलिये वे जो कुछ कहते हैं हम उसी को ज्यों का त्यों मान कर सच्चा समझते हैं। गुरू ने राधास्वामी नाम बताया और हमने धारण कर लिया। माँ अपने बच्चे को जो कहती है वह उसे ठीक समझता है। यदि हमको गुरू के बताये नाम पर विश्वास नहीं है तो फिर रूहानियत (अध्यात्म) की कमाई हो चुकी। यह पहिली शर्त है। जब तक गुरू को अपनी बुद्धि के

अनुसार समझ-बूझ न लेगा तब तक कोई उनसे नाम क्यों लेने लगा। विरोधी लोग कहते हैं पंथ तो ठीक है मगर नाम में विरोध है। लेकिन वह यह नहीं ख्याल करते कि नाम ही को मजहब कहते हैं। और मजहब क्या होता है। हम गुरु को सतपुरुष मानते हैं और उनकी वाणी को पूर्ण विश्वास से सच्चा समझते हैं।

य विवेक विश्वास की बात है। व्यर्थ तर्क की यहाँ गुंजाइश नहीं है जो मान लिया वह मान लिया और बस।

(३) गुरु ने कहा—'यह निज (जाति) नाम है जिसकी मिलती जुलती ध्वनि अभ्यास करते समय सबसे ऊंचे स्थान में सुनी जाती है।' हमने नाम धारण कर लिया। अभ्यास प्रारम्भ कर दिया। जो धुनि नीचे के स्थानों में सुनी गई गुरु के कथानुसार थी। उनसे आगे के स्थानों की धुनि की प्रतीति होती गई जब वहां पहुंचे वह स्वयं सुनने में आई या आवेगी।

(४) परम संत कबीर साहब जो सन्त मत के इस कलियुग में आदि गुरु कहलाते हैं, उनकी गुरु वाणी है:

कबीर धारा अगम की, सत्गुरु दई लखाय।
ताहि उलटि सुमिरन करो, स्वामी संग लगाय ।।

(५) हरएक शब्द में विशेष शक्ति होती है और जो व्यक्ति जिस नाम, जिस मन्त्र और जिस शब्द की कमाई करता है, वही सच्चे अर्थों में उसके प्रभाव, भाव और शक्ति का उत्तराधिकारी होता है। गुरु ने उसकी कमाई की। कमाये हुए नाम का प्रताप बिना कमाये हुये नाम के प्रताप से भिन्न होता हैं। सारी बात कमाई पर निर्भर है। हम विशेष प्रकार के विचारों की कमाई करते हैं और जो बात कहते हैं सुनने वाला पर उसका प्रभाव तुरन्त होता है वही बात यदि बिना कमाई करने वाला कहे तो कोई प्रभाव नहीं होता। कमाई असली

वस्तु हैं। गुरु ने अपना कमाया हुआ नाम इनको प्रदान किया प्रथम तो उसकी कमाई की खमीरी कीमियाई प्रभाव, दूसरे हमारी अपनी कमाई का फल इन दोनों बातों ने हमको विश्-वासी बना दिया। अब इससे अधिक और क्या चाहिए।

:०:—

जब तक मनुष्य कमाई नहीं करता उसे फल नहीं मिलता और उसका विश्वास पक्का नहीं होता। यह कहा गया है कि **राधास्वामी मत** मौखिक बोलचाल या शुद्ध फिलोस्फी (दर्शनशास्त्र) का मार्ग नहीं है यह अमल (करनी)का मार्ग है यहां यह नहीं कहा जाता कि 'आओ और कहो' बल्कि यहाँ यह मन्त्रणा दी जाती है कि'जाओ और कर देखो।' कहने और कर देखने में बहुत बड़ा अन्तर होता है। भूमिका में वर्णन है --

"इस मत के जानने वालों और सुरत शब्द के अभ्यास करने वालों को चन्द रोज में आप उनके अन्तर में मालूम हो जाएगा कि यह क्या भारी नियामत और दुर्लभ पदार्थ उनको मिला है और जिस कदर दिन-दिन उनकी हालत मोक्ष और उद्धार की होती जायेगी। उसको यह आप देख लेंगे। और सब मतों के सिद्धान्त और मुकाम की और उनकी गति की आप खबर हो जाएगी कि कौन-कौन मत कहाँ से निकला है और कहाँ तक उसकी रसोई और पहुंच है।"

—:०:—

दुनियाँ में जितने सम्प्रदाय पैदा हुए, वह योगियों,ऋषियों बुद्धों, तीर्थकरों, नबियों और रसूलों की आत्मिक उन्नति के परिणाम हैं। जिसकी जहाँ तक पहुंच गई उसने वहां तक की तालीन अपने शिष्यों को दी। जब तक लोग अन्तमुखी साधन

करते थे तब तक उन्हें खबर थी। जब वह बाहरमुखी हो गये, वह विद्या भी लुप्त हो गई और वह शब्द जाल का आडम्बर रच-रच कर उसकी जबानी महिमा गाने लगे। कोई किसी को कहे भी तो क्या कहे। बिना सचाई को जाने हुए कोई मानता कब है। ऋषियों ने समाधि के समय वैदिक ज्ञान और वैदिक सिद्धान्त प्राप्त किए बुद्ध का निर्वाण पद उनकी बेखुदी और लय अवस्था का ज्ञान था मूसा को तूर पहाड़ पर (अपने हृदय के अन्दर) दस आदेश मिले। हजरत मुहम्मद साहब ने एकान्तवास में इस्लाम के सिद्धान्त प्राप्त किये आदि आदि। गणपति गणेश के उपासक योग की अत्यन्त नीची श्रेणी के अभ्यासी है। वैष्णव विष्णु के जानने वाले नाभिचक्र की अग्नि के उपासक हैं। शैव शिव के विश्वासी हृदय चक्र के कैलाश निवासी भगवान के मानने वाले हैं। शाक्तिक शक्ति धर्म के अनुयायी कन्ठ चक्र की आद्या और आदि माया के उपासक हैं सूर्य देवता की पूजा करने वाले तीसरे तिल के ज्योति निरंजन के पुजारी हैं। यह सब योग के नींचे स्थानों में अटके हुए हैं। राधास्वामी मत इन सब से ऊंची तालीम देता है, जिसका वर्णन शनै-२ इसी पुस्तक में आयेगा। दुनियाँ के समस्त सम्प्रदाय इसके पेट में है, मगर जानकारी न होने के कारण कोई उसकी जाँच पड़ताल की ओर आकर्षित नहीं है। यदि थोड़ा भी योग का साधन किये होते तो इन बातों को समझ सकते। जब लोग राधास्वामी मत में शामिल होकर अभ्यास करेंगे तो स्वयं ही ऊंचे मण्डल पर पहुंचकर इस अति दुर्लभ पदार्थ के हृदय से कायल होंगे और उन्हें अधिक कहने सुनने की आवश्यकता न रहेगी।

जब तक किसी को आत्म ज्ञान की उत्कंठा न हो और वह

दुनियां से थोड़ा बहुत भी उदासीन न हो तब तक इस मार्ग या साधन से उसको किसी प्रकार का लाभ नहीं पहुंच सकता। वाणी (पोथी सार वचन) में लिखा है:

"यह मत और इसका अभ्यास खासकर उन लोगों के वास्ते है जिनको सच्चे मालिक के मिलन की चाह है। और जिनको अपने जीव के कल्याण और उद्धार की दिल से फिक्र है और जो लोग कि दुनियाँ के सामान, नामवरी और मानबड़ाई और इल्म यानी विद्या को पसन्द करते हैं और परमार्थ को अपना रोजगार मुकर्रर करते है, इनके वास्ते यह उपदेश नहीं है, और न उनको यह कलाम पसन्द आयेगा, बल्कि जहाँ तक मुमकिन होगा,वह इस पर तान करेंगे और गलत और फिजूल ठहरायेंगे। और सबब इसका यह है कि इस कलाम को सुन-उसका मन घबरा जाता है कि उसके मानने से उनकी दुनियाँ और देह के मजे बिल्कुल जाते रहेंगे और रोजगार में फर्क आ जावेगा। इस वास्ते वे जहाँतक बन सकेगा ऐसी कोशिश करेंगे कि यह मत जारी न होने पावे ताकि जिन जीवों को उन्होंने गफलत में डाल रखा है और तरह-तरह की पूजाओं में भरमा रक्खा है और उनसे अपने रोजगार और आमदनी की सूरत पैदा कर रक्खी है, वे कौल और हुक्म बरदारी से अलहदा न हो जावें और उनकी पूजा और आमदनी में खलल न पड़े।"

यह राधास्वामी मत और उसके बड़प्पन का ढ़ाँचा है। हुजूर आशीर्वाद दें कि जो व्यक्ति इस भूमिका को ध्यानपूर्वक पढ़े उसके दिल में राधास्वामी मत का बड़प्पन उत्पन्न हो। और वह रूहानियत (अध्यात्म) की ओर आकर्षित होकर मानस जन्म नर व देही के सुफल करने का यत्न सोचने लगे।

भूमिका समाप्त

—:०:—

राधास्वामी योग

—:o:

राधास्वामी नाम, जो गावे सोई तरे।
कलि कलेश सब नाश, सुख पावे सब दुख हरे।।

सन्देश

"सुनाना[1] अधिकारी को इस सन्देश का कि परम पुरुष पूरण धनी राधास्वामी जीवों को महा दुखी और भ्रम में भूला हुआ देखकर आप उनके उद्धार के निमित्त सत सतगुरू रूप धारण करके प्रगट हुये और अति दया करके भेद अपने निज स्थान का और युक्ति उसकी प्राप्ति की सुरत शब्द मार्ग से उपदेश करते हैं। जीवों को चाहिये कि उनके चरण कमल में प्रेम प्रीत करें"

'इस मार्ग की कमाई से मन वश में आवेगा। और सिवाय इसके दूसरा कोईउपाय मन के निश्चल और निर्मल करके चढ़ाने का आकाश के परे इस कलियुग में निश्चय करके नहीं है। जितने मत ससार में प्रवृत्त हैं उन सबका सिद्धान्त सन्तों की पहली मंजिल तक खत्म हो जाता है। जो सुरत शब्द का अभ्यास विधिपूर्वक बन आवे तो तन और सुरत निर्मल होकर शब्द को पकड़ के आकाश से परे जो घट-घट में व्यापक है चढ़ेगी और नौ द्वार अथवा पिन्ड देश को छोड़कर ब्रह्माण्ड यानी त्रिकुटी में पहुँचेगी। और वहां से सुरत मन से अलग होकर

---

१) पोथी सार वचन राधास्वामी के पद अनुरूप तरकीब में इसके एक-२ को चुने हुए शब्द के आधार पर सार तत्व की शिक्षा का सिलसिला कायम किया गया है ताकि इसको पढकर असली पुस्तक के समझने में कठिनाई न हो। पाठक जन यदि इसे ध्यानपूर्वक आदि से अन्त तक पढ़ लेंगे तो मुमकिन नहीं कि वह असलियत की समझ से वंचित रह सकें।

आगे चलेगी और सुन्न और महासुन्न के विलास देखती हुई और सत-लोक और अलख लोक और अगम लोक में दर्शन सद्पुरुष और अलख पुरुष और अगम पुरुष का करती हुई राधास्वामी के निज देश में प्राप्त होगी। इसी स्थान से आदि में सुरत उतरी थी और त्रिलोकी में आकर काल के जाल में फंस गयी थी। सो उसी स्थान पर फिर जा पहुंचेगी।"

सुरत शब्द मार्ग की यह सब स्थान यानी विष्णु लोक और शिव लोक और ब्रह्म लोक और शक्ति लोक और कृष्ण लोक और राम लोक और ब्रह्म और परब्रह्म पद और जैनियों का निर्वाण पद और ईसाईयों का मुकाम खुदा और रूहउल कुद्स और मुसलमानों के आलमुलमलकत और जबरूत और लाहूत सुन्न के नीचे नीचे रास्ते में पड़ेंगे और यह सब लीला देखती हुई सन्तों के प्रताप से अपने निज देश को प्राप्त होगी।" (राधास्वामी सार वचन से उद्धृत)

यह सन्देश है जो हजूर मोअल्ला मुफदस की ओर से जारी हुआ था। इसकी भाषा संक्षिप्त और सरल है। शब्द सीधे सादे हैं। विषय भी कठिन नहीं है सुनते ही कुछ न कुछ समझ में आने लगता है। मगर समझ में भी केवल उन्हीं के आता हैं जो अधिकारी हैं और जिनको अधिकार नहीं है उन्हें कोई लाख समझावे वे समझ नहीं सकेंगे।

सूर्य चमक रहा है उसके प्रकाश को केवल वह देख सकते हैं जिनकी आँखें हैं। आँखें खुली हुई हैं। आँखों में प्रकाश के तेज को सहन करने की शक्ति है वरना बन्द आंखें अथवा किसी प्रकार से दूषित आंखें रखते हुये भी ऐसे बहुत जीव मिलेंगे जो चमकते हुए सूर्य को न देख सकते हैं और न उसके तेज या प्रकाश की सत्ता को स्वीकार कर सकते हैं। आँख वाले मनुष्य दुनियाँ को प्रकाशित करने वाले सूर्य के तेज को ग्रहण करके उससे लाभ उठाते हैं। चमगादड़ और उल्लू आँख रखते हुए

भी उसे न देख सकेंगे, और न उसके अस्तित्व को मानेंगे।

यह अधिकार है, यह योग्यता है, यह पात्रता है। बिना अधिकार संस्कार, योग्यता व पात्रता के लोग अपने चारोंओर प्रकृति के भण्डार की बिखरी हुई दैन पर दृष्टि तक तो डाल नहीं सकते: फिर वह उससे लाभ क्या प्राप्त कर सकेंगे।

इस अधिकार के बिना किसी को कुछ नहीं मिलता। यह माना हुआ और प्रमाणित सिद्धान्त है। इसी कारण से इस सन्देश में लिखा गया है कि उसका सुनाना केवल अधिकारी जीवों के ही प्रति है। दूसरे लोग इससे कम लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

जल बरसता है। सीधे बरतनों में हो उसकी बूंद पड़कर भर जाती है, लेकिन ओंध बरतन में एक बूंद भी नहीं ठहरती मनुष्य का मन इसी प्रकार का पात्र है। यदि वह सीधा तो उसके अन्दर गुरू के उपदेश की अमृत रूपी बूंदें समायेंगी और यदि वह उल्टा है तों हजार मेह वर्षा करे उसके अन्दर एक बूंद भी न समायेगी। प्रकृति की समस्त दैन बड़ी उदारता और बहुतायत के साथ हर स्थान पर बंटती रहती है, पर मिलती उनको है जो उसके उत्तराधिकारी हैं। औरों के हाथ कुछ नहीं आता।

कोई इस बात का भूलकर भी विश्वास न करे कि अनाधिकारी को भी गुरू के उपदेश से लाभ पहुंच सकता है। हर उपदेश केवल ऐसे ही व्यक्तियों के लिये है जो इसके अधिकारी हैं।

अब प्रश्न यह है कि अधिकारी कौन से हैं? उसका उत्तर भी उसी पंक्ति में मौजूद है। दूसरी जगह जाने की आवश्यकता

नहीं है। **"जो महा दुखी हैं, भूले भरमे हैं, जो अपने उद्धार के ख्वाहिशमंद हैं" वह ही अधिकारी हैं।** और सत्पुरुष राधास्वामी ऐसों ही के उद्धार के निमित्त प्रकट हुए हैं।

भूल और भ्रम अज्ञान है। अज्ञान महादुख का कारण है। भूला हुआ मनुष्य ही बन्धन में पड़ता है, और इस बन्धन से दुखी होकर मुक्ति या छुटकारा पाने की इच्छा करता है। जो रास्ता भूले हुये हैं या गलत रास्ते पर हैं और हैरान हैं उन्हीं के सद्मार्ग पर चलाने और सद्मार्ग दिखाने का प्रबन्ध है। जो अपने को यह नहीं मानता कि वह रास्ता भूला हुआ है वह किसी से क्यों रास्ता पूछेगा और कोई से क्या रास्ता दिखायेगा। और वह किसी की बात को मानने कब लगा ? जो दुख दुख नहीं समझता और सुख की इच्छा नहीं रखता, उसे सुख का प्राप्त करने की युक्ति कौन बतायेगा और क्यों बतायेगा ? और वह इस बताने का आदर कब करने लगा।

विद्या उनके लिये है जो विद्याहीन है। मुक्ति उनके लिये है जो बन्धन में फंसे पड़े हैं। सुख दुखी जीवों के लिये है। मगर शर्त यह है कि वह अविद्या, बन्धन और दुख के दर्द से बेचैन हो। यह बेचैनी और व्याकुलता ही अधिकारी का एक मात्र निश्चित लक्षण है।

भूखे के लिये रोटी और प्यासे के लिये पानी है। जिनको भूख प्यास के वेग से दुख नहीं है उनको अन्न और जल देना व्यर्थ है। वह उसका आदर तक न करेंगे।

अन्धे के लिये आंखें और बहरे के लिये कान हैं। जो अंधा व बहरा नहीं है, उसको कोई आँख और कान देकर क्यों अपना अनादर और अपमान कराने लगा।

संसार की तीन ताप की अग्नि से जो प्राणी दुःख भोग रहे हैं, उन्ही को शान्ति रूपी ठंडक देने वाली झील में गोता लगाने का अधिकार है। दूसरों को क्या पड़ी है जो उसकी ओर आँख उठाकर दृष्टि डालेंगे।

ऐ संसार के दुःखों से पीड़ित लोगो ! तुम धन्य हो तुम्हारे ही हेतु सत् पुरुष राधास्वामी प्रकट हुए हैं। ऐ जगत केबंधनों में फंसे हुए जीवो ! तुम भाग्यशाली हो ! क्योंकि तुमको ही मुक्ति दिलाने हेतु सत्गुरू प्रकट हुये हैं। ऐ भवसागर की लहरों में थपेड़े खाने वाले मनुष्यो! तुम भाग्यशाली हो क्योंकि तुम्हारे पार करने के हेतु गुरू मल्लाह बनकर शब्द की नौका बनाकर जाये हैं। तुम अधिकारी हो और तुम्हीं गुरू के महत्व को समझकर उनसे दया के भागी हो सकोगे। औरों को इस परम पुनीत सत्पुरुष से कोई सम्बन्ध नहीं है। तुम गुरू के हो और गुरू तुम्हारे हैं। तुम उनके हो वह तुम्हारे हैं। आओ ! और इस उपदेश के अमृत कुण्ड में डुबकी लगाओ। यह अधिकार की व्याख्या है।

:०:—

दूसरी बात जो इस उच्च श्रेणी के अर्थ पूर्ण संदेश में है वह यह है कि –

"सत् पुरुष राधास्वामी ने सतगुरू रूप में जहूर किया है।"

सवाल है कि गुरू ने मनुष्य शरीर क्यों धारण किया ? दूसरी तरह से शिक्षा और उपदेश का प्रबन्ध क्यों नहीं किया इस प्रश्न का उत्तर देना उतना ही आवश्यक है जितना कि अधिकार की व्याख्या करनी आवश्यक थी।

मनुष्य, मानवीय प्रकृति वाला है। उसके चित्त में मानवीय भाव, मानवीय अनुभव और मानवीय विचार हर समय

उठते रहते हैं। मनुष्य को मनुष्य से ही प्रेम होता है। मनुष्य और अन्य जातियों के प्राणियों में प्रेम का सम्बन्ध सच्चे अर्थों में नहीं होता। मित्रता जब होगी, जब एक ही जाति के प्राणियों में होगी। भिन्न जातियों (गैर जिन्स) के प्राणियों की मित्रता विश्वास के योग्य नहीं है जो हमको मार्ग दिखाने वाला हो उसके भाव हमारे जैसे हों और हमारी जैसी आकृति और रूप का बन कर आये, तभी तो हमारा उससे प्रेम होगा और हम उसकी ओर आकर्षित होंगे। यदि वह अन्य रूप में आता है तो हमारे और उसके बीच में मित्रता होना असंभव है। मनुष्य शेर और कुत्तों को अपने मतलब का बना लेता है मगर उनसे मित्रता नहीं करता। यह प्रकृति का अटलनियम है। यदि ईश्वर अपने पूर्ण तेज के साथ प्रगट हो तो प्रेम प्रीति के बदले उसे देखकर चित्त में भय उत्पन्न होगा। उसके तेज को आंखें सहन कब कर सकेंगी। वह एकता और समानता के बदले उल्टे हमारी व्याकुलता, अशान्ति और कष्ट कलेश का कारण होगा। हम उसको ओर कब आकर्षित होने लगे ?

बात तो हम साफ साफ, सीधी-सादी और सच्ची कहते हैं यदि किसी की समझ में न आवे तो इसमें हमारा क्या दोष है

---

(१) कुनद हमजिंस वा हमजिन्स परवाज।
कबूतर व कबूतर बाज वा बाज।।

अर्थ – एक जाति वाला अपनी ही जाति के साथ उड़ता है। कबूत कबूतर के साथ बाज वाज के साथ।

गुसाई तुलसीदास जी ने भी लिखा है—खग जाने खग ही की भाषा।यही कारण था कि शिवजी ने गरुड को पक्षी होने के कारण ज्ञान का उपदेश स्वयं नही दिया।

स्त्री और पुरुष संसार में एक जान और दो शरीर कहलाते हैं । रात-दिन का रहना सहना । एक दूसरे पर इतना आसक्त हैं कि अपने आप को न्यौछावर करने अर्थात् मिटा देने को तत्पर रहता है । पर उनमें से किसी एक की मृत्यु हो जाने दो फिर क्या दशा है सजातीयपना चला गया । विजायतीपना आ गया । एक दूसरे से भय करने लगा । यदि पुरुष अपने सूक्ष्म शरीर से आता है तो स्त्री चिल्ला कर भागती है । भूत-भूत पुकार कर आकाश और पाताल को सिर पर उठा लेती है । हुआ क्या पुरुष तो पुरुष हो था, अब उससे घृणा क्यों है ? वही बात है कि बिजातीयपने का दोष आ गया । वह भूलोक की प्राणी है वह सूक्ष्म लोक का प्राणी है । यह भौतिक शरीर वाली है, वह सूक्ष्म शरीर वाला है ऐसी दशा में दोनों के बीच कब और कैसे मेल होने लगा । यही दशा पुरुष की होती है । स्त्री मर गई और रात के समय अपने सूक्ष्म शरीर में पुरुष के पास आई पुरुष डर के मारे थर-थर काँप रहा है । सुधि-बुधि सब भूल गया । वह उससे बातचीत तक नहीं करना चाहता । इसका कारण क्या है ? वही विजातीयपने की बला ! तेल में पानी पड़ेगा तो दीपक चिड़-चिड़ करेगा । अनमेल का सम्बन्ध सदा दुखदायी होता है । तुम चाहे मानो या न मानो पर है ये सब सच्ची-सच्ची बातें ।

इस दृष्टि से हम स्वाभाविक व प्राकृतिक रूप से केवल अपने सजातीय के प्रेम का ही दम भरने पर विवश रहते हैं । यह हो प्रकृति का नियम है हम हजार अपने चित्त को विवश करें पर विजातीय से प्रेम होना असम्भव है । सच्चा विश्वास कभी नहीं आ सकता । जब प्रीति और विश्वास की नींव दृढ़ नहीं हुई तो फिर कैसी भक्ति । और कैसा प्रेम और स्नेह ?

इसलिये भाई ! यदि ईश्वर भी हमको अपना दर्शन देना चाहता है तो वह केवल मनुष्य के रूप में प्रकट होकर दे, तब तो हम उसके भक्त हो सकेंगे,और यदि वह आकाशी बना हुआ हम पृथ्वी मन्डल के प्राणियों को भक्ति सिखाना चाहता है तो फिर उनसे कहो कि यह हमारी शक्ति के बाहर है ।

लोग रात-दिन ईश्वर-ईश्वर चिल्लाते रहते हैं पर इन ईश्वरवादियो के पुजारियों में सच्चा कौन है ? एक भी नहीं । हजार तर्क वितर्क और युक्ति कोई सुनाया करे मगर जो बात सच्ची है वह सच्ची हैं । मजहबों के भय से मनुष्य सत्य की ओर दृष्टि नहीं करता । क्या इससे कभी किसी को आत्मिक ज्ञान प्राप्त होता है । राम-राम कहो । अवतारों की पूजा और नवी रसूलों की इज्जत में यही भेद छिपा हुआ है यह मनुष्य अवश्य है इससे हम इन्कार नहीं कर सकते,मगर ये सचाई है ।

किसी को कोई कहाँ तक समझाये । लोग अपनी आँखों से देखते भी हैं मगर मानते नहीं । इसको सच्चा समझते भी हैं पर वृथा तर्क वितर्क में पड़े रहते हैं । हिंदुओं में विष्णु के दस अवतार माने जाते हैं परन्तु नरसिंह,वाराह, कच्छ और मच्छ के मदिर कितने हैं ? राम . कृष्ण और बुद्ध के अगणित हैं, क्योंकि वह मनुष्य रूप वाले थे ।

मुसलमानों में मानव पूजा (आदम की सिजदा) करने की प्रथा पीढ़ी दर पीढ़ी चली जाती है । अन्त में सूफियों ने उसी मानव पूजा आदम परस्ती) के नियम को (मुरशिदपरस्ती) गुरु पूजा के रूप में रिवाज दिया । तव यह कमी पूरी हुँई । ईसाईयों में मसीह के रूप में ईश्वर के पूजने का आदेश है । यह रहस्य है, गुप्त भेद है, जो कठिनाई से किसी-किसी की समझ में आता है ।

सार वचन की वाणी है:—

(६४) राधास्वामी भक्ति बरन बतायें री ।
रामास्वामी गुरू की भक्ति दृढ़ायें री ।।
६५) रामास्वामी वेद कतेब उडायें री ।
राधास्वामी मुरशिद कोल ठहजाये री ।।
(६६) राधास्वामी मुरशिद खुदा दिखायें री ।
राधास्वामी पीर पैरतो सिखायें री ।।

राधास्वामी मत दुनियाँ में अकेला पंथ है जो विरोधियों के बुरा भला कहने और उंगली उठाने की परवाह न करता हुआ सच्चे और साफ शब्दों में गुरू पूजा के सनातन, असली और सच्चे पंथ का पुनरुद्धार और प्रसार करता है। सूफी इत्यादि बेचारे फिर भी डर के मारे सार वस्तु के प्रगट करने में आनाकानी करते है। यहाँ जो बात है वह साफ-साफ है। लगाव- लपेट और बनावट से सम्बन्ध नहीं रखा जाता है यह वाणी है जो मीनार की चोटी पर चढ़कर सुनाई गयी है।

यह सत्पुरुष राधास्वामी के सत्गुरु स्वरूप और नर स्वरूप धारण करने के सवाल का जवाब है।

—:o:—

सन्देश में इस बात पर जोर दिया गया है कि "(सत्गुरु) अति दया करके भेद अपने निज स्थान का और जुगति उसकी प्राप्ति को सुरत शब्द मार्ग से उपदेश करते हैं। जीवों को चाहिए कि उनके चरण कमल में प्रेम और प्रतीति करें।"

निज स्थान और सुरत शब्द योग का वर्णन अपने स्थान पर किया जायेगा। यहाँ प्रेम और प्रतीति के सम्बन्ध में कुछ पंक्तियाँ लिखी जा रही हैं।

यह बता दिया गया है कि प्रेम केवल सजातीय के साथ ही किया जा सकता है। प्रेम और प्रतीति करने से प्रेमीऔर

प्रीतम के भावों में समता आती है और जो गुण एक में मौजूद होता है दूसरे में भी सहज में ही उतर आता है। मन की निर्मलता बिना सच्चे प्रेम के नहीं होती। जब तक मन निर्मल नहीं होता एक के भाव का प्रतिबिम्ब और प्रभाव दूसरे पर नहीं पड़ता। यह भी प्राकृतिक नियम है। यदि शीशे में तनिक भी दोष है तो रूप भलीभाँति दिखायी नहीं देता। मनुष्य कुछ भी करे, केवल किसी के सच्चे प्रेम को चित्त में बसा ले और वह सहज ही में उसके चित्त की दशा, उसकी स्वच्छता और समदृश्यता का उत्तराधिकारी बनता चलेगा।

सूफियों की कहानी है:—

कैसर रूम (आगसटस सीजर-रूम के राजा) के दरबार में चीनी चित्रकार नौकर थे जिन्हें अपनी कला पर गर्व था। रूमियों को भी किसी सीमा तक इस कला की जानकारी थी सम्भव है वह सूफी पन्थ के जानकार रहे हों। उन्होंने भी चित्र खींचने का दावा किया। कैसर को इनकी परीक्षा की सूझी।

आमने-सामने की दीवारें चित्र खींचने के लिये नियत कर दी गई। दोनों पक्ष पर्दा डालकर चित्र बनाने लगे। चीनियों ने बादशाह से सामान के लिये बहुत कुछ माल माँगा जो बड़ी उदारता से दिया गया, मगर रूमियों ने एक पैसा भी नहीं माँगा। दोनों ही पर्दों के भीतर अपना-अपना काम करते रहे आखिर महीनों के बाद चीनियों ने कहा कि चित्र तैयार है। बादशाह ने रूमियों से पूछा। इन्होंने भी कह दिया कि हमारे चित्र भी तैयार हो गये हैं। परीक्षा के दिन बादशाह आया। उसे ख्याल था कि चीनी इस कला में श्रेष्ठ और विख्यात है। पहले उनका पर्दा उठा गया। चित्र बहुत बढ़िया दिखायी दिये बादशाह अति प्रसन्न हुआ। फिर रूमियों से पर्दा उठाने

को कहा गया पर्दा उठा दिया गया और देखो जो कुछचीनियों ने उतना माल और सामान लेकर चित्र बनाया था हूबहू वहीं चित्र बिना किसी त्रुटि के रूमियों की दीवार पर भी दीखपड़ा बल्कि इसमें दूसरे की अपेक्षा अधिक सुन्दरता थी। देखने वाले देख कर चाकत रह गये। जिभ्या बन्द, चीनी खुद हैरान। यह चमत्कार था या सचमुच कारीगरी थी। बादशाह ने सवाल किया। 'इस समता का रहस्य क्या है ? जब तुमने इनके काम तक को नहीं देखा तब फिर इन जैसी तसवीर कैसे बना ली। "हिकमते चीन हुज्जते बंगाला" यह एक प्रसिद्ध कहावत है। चीनी बड़े कारीगर होते हैं। बंगालियों से अधिक (हज्जत) तर्क करने वाली संसार में कोई जाति नहीं है। रूम के सूफियों ने जवाब दिया। 'इन्हीं (चीनियों) ने तस्वीर बनाई, हमने केवल दीवार को रगड़-रगड़ कर खूब स्वच्छ और चमकदार बना लिया। और चीनी चित्र का प्रतिबिम्ब हमारी स्वच्छ और चमकदार दीवार पर बना है। जो वहां है वही यहां है। एक बाल बराबर अन्तर भी नहीं है।

इस प्रश्न से बादशाह अति प्रसन्न हुआ और दोनों को एक समान इनाम दिया।

यह मन की निर्मलता का एक दृटान्त है। मन को प्रेम का माँझा देकर खूब स्वच्छ और शुद्ध बनाते चलो। इसमें न कुछ लगता है आर न अधिक परिश्रम ही करना पड़ता है। जब प्रेम और प्रतीति के रंग में रंगा हुआ मन सत्गुरू के समीप उपस्थित होगा तो स्वयं ही उसमें गुरू की कमाई की हुई असलियत का नक्शा स्थित हो जायेगा और सहज में काम बन जायेगा।

प्रेम और प्रतीति करने के आदेश का यह कारण है।

मगर जीव यों ही प्रेम नहीं करते। इस कारण उनको

शब्द योग का साधन बता कर और सत्संग कराकर बाह्य व अ तरीय सहायता दी जाती है तब धीरे-२ प्रेम का जादू अपना प्रभाव डालकर शिष्य को गुरू की संगत, प्रेम, सत् ज्ञान और आत्मिक ज्ञान का उत्तराधिकार प्रदान करता हैं।

—:o:—

अधिकार, गुरु की संग, सेवा और सुरत शब्द योग का संकेत कर सन्देश ने इस अभ्यास की आवश्यकता वर्णन की जाती है।

पहिली बात यह है कि संसार में जितने दुख और बन्धन हैं वह मन की चंचलता के परिणाम हैं। मन की चंचलता ही अज्ञान का मूल कारण है और इस अज्ञान के कारण हम इस शारीरिक जगत में फंसे हैं। इस बन्धन से छुटकारा पाने का साधन यह है कि पहले अभ्यास करके मन को वश में लाया जाय। फिर इसी मन पर अधिकार पाकर आकाश से पर पहुँचाया जाय और तब उससे ज्ञान,मुक्ति और आनन्द की प्राप्ति होगी।

इन संक्षिप्त शब्दों में इतना विषय भरा हुआ है कि उसकी व्याख्या के लिये दफ्तर के दफ्तर की आवश्यकता है, पर हम उसे यहाँ थोड़ा-२ बताकर धीरें-२ उसके गुप्त भेद को दूसरें वचनों में खोलते जायेंगे।

मन को आकाश से परे क्यों पहुंचाया जाय ? क्योंकि आकाश और गगन मंडलों से ही तत्वों की उत्पत्ति होती है। तत्वों ही से शरीर इन्द्रिय, मन और मस्तिष्क बनते हैं, और तत्वों ही से ससारी पदार्थ प्राप्त होते हैं और वह इनसे बध जाते हैं। इस कारण मन को शुद्ध करके प्रथम इनके विवेक की आवश्तकता है। और फिर इन तत्वों के मंडलों के परे

परे जाना है। सार ज्ञान और सत् ज्ञान इनके परे ही है। यह कारण अभ्यास कराने और मन के ऊपर चढ़ाने का है।

दूसरी बात यह है कि चंचल मन को निश्चल और निर्मल किस तरह किया जाय। उसकी सबसे अधिक सहज विधि शब्द का सुनना है। शब्द हर जगह, हर मंडल और हर स्थान में व्यापक में। शब्द में मन के एकाग्र करने की स्वाभाविक शक्ति और आकर्षण मौजूद है। यहां इस बाहरी जगत में गाने-बजाने से चित्त की एकाग्रता और मन की स्थिरता का भेद सबको मालूम है। गाने-बजाने को सुनकर मन स्वयं इसकी ओर आकर्षित होकर निश्चल और स्थिर हो जाता है। इसी प्रकार जो लाभ बाहर शब्द के सुनने से होता है वही लाभ अन्तर के शब्द से सुनने से होता है। जो यहाँ है वही वहाँ है इस अन्तर के शब्द के सुनने से चित्त में एकाग्रता की शक्ति आयेगी। और अभ्यास करते-करते धीरे-धीरे वह एक स्थान को पार करता हुआ स्वयं दूसरे स्थान की ओर बढ़ता चलेगा, विचार शक्ति बढ़गी और जब वह सब मण्डलों को पार करके सार तत्व के मूल स्थान पर पहुंचेगा, उसे परमानन्द और सदा के लिये मोक्ष प्राप्त हो जायेगा और जन्म-मरण का खटका नितान्त दूर हो जायेगा।

तीसरी बात जो इशारे के तौर पर कही गई है वह यह है कि इस आत्मा तक पहुंचने मात्र के सिलसिले में शक्ति लोक, ब्रह्म लोक इत्यादि इत्यादि सब रास्ते में मिलेंगे। उनकीयात्रा उसे उत्साहित करते हुए आगे की ओर रुचि दिलाती रहेगी।

यह लोक लोकान्तर वास्तव में रचना में मौजूद है या यह नितान्त मनगढ़न्त और कल्पित है? सन्तों का कहना है कि वह लोक-लोकान्तर भ्रम नहीं है बल्कि यह यथार्थ में है। यहाँ

पर हर वस्तु का मंडल है, सूर्य मंडल चन्द्र मंडल, वृहस्पति मंडल इत्यादि सभी हैं। इसी तरह शक्ति मँडल, शिव मंडल और ब्रह्म मंडल भी है। बिना मंडल के ब्रह्माण्ड का कार्य भी नहीं चलता। इसलिये यहाँ उनका रहना आवश्यक है। इन्हीं के नामों को भिन्न-भिन्न धर्मों में भिन्न-भिन्न नाम और रूपों में वर्णन किया है। यदि कोई नियम पूर्वक अभ्यास की सहायता से उपर की ओर चढ़ाई करता हुआ चलेगा तो सहज रीति से रास्ते में इनको देखता हुआ असल पद की ओर चला जायगा और वहाँ नित्य परमानन्द नित्य जीवन और नित्य मुक्ति का भागी हो जायेगा।

यह इस सन्देश का परिणाम है जो थोड़ी सी पंक्तियों में वर्णन कर दिया गया। अब आगामो वचनों में कुल विषयों की व्याख्या की जायेगी। सन्देश सार मात्र हैं। संक्षिप्त वर्णन है। आगे वचनों में उसी की स्पष्ट व्याख्या है।

* इति संदेश *

शब्द

मेरा गुरु फकीर था, फकीर कर गया।
जिसका गुरु अमीर था, अमीर कर गया।१।
बाहर से वह फकीर था, अन्दर अमीर था।
मुझे भी खुफिया तौर पर अमीर कर गया।२।
वह खुद भी आजाद था, मुझे आजाद कर गया।
जो कैद व बन्द में था, वह आसीर कर गया।३।
वह पीर बन कर आया था, पीरे मुगाँ था वह।
मुझको दीवाना करके, वह तश्हीर कर गया।४।
वह इसमें आजम देता था, ऊपर को चढ़ाता था।
इधर उधर से रोक कर, सीधा तीर गया।५।
दुनियाँ से वह उदास था, और गुरू का दास था।
मेरे लिये भी गुरू को ही जागीर कर गया।६
सारे जहाँ से मिल गया, रूहानी बनकर वह।
सारे जगत को अपनी, वह तसवीर कर गया।७।
हर इक को देख करके, मुस्कराता रहता था।
मेरे लिये हर इक को, दिल पजीर कर गया।८।
वह जीतता था प्रेम से, हर एक के दिल को।
मेरी जबान को प्रेम की, रामशीर कर गया।९।
जादू था उसकी कलम में जादू निगार था।
'गाफील'के दिल की सीधी वह लकीर कर गया।१०।

:—:

R. S.

विनती

सतगुरु चरण शरण की छाया दीजें,
चरण शरण की छाया ।टेक।
मैं तो दीन अधीन दयामय,
मोह जाल लिप टाया ।टेक।
तुम प्रभु जीव उवारण आये,
कीजे पतित पर दाया ।टेक।
दुविधा, संशय, छल, चतुराई,
भूल भरम भरमाया ।टेक।
भोग सोग में निशदि न रहता,
व्यापे काम मद माया ।टेक।
अगम अगोचर रूप तुम्हारा,
कोई भेद न पाया ।टेक।
मैं अज्जान कुछ मरम न जानूं ।
महिमा क्या कहूं गाया ।टेक।
मुझ सम पापी और न कोई ।
मन वच कर्म और काया ।टेक।
नाम दान की रिद्धि निद्धि दीजे ।
भिक्षा मांगन आया ।टेक।
ज्ञान ध्यान भक्ति गुरू सेवा ।
श्रुति स्मृति बहु गाया ।टेक।
राधास्वामी चरण शरण बलिहारी ।
गुरू ने आन चिताया ।टेक।

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ नव०, १९८८

सुधा मित्तल

प्रकाशक के हस्ताक्षर

Regd. NO L—ALG.28

मिलने का पता :—
'मनुष्य बनो' कार्यालय
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़ — २०२००१ (उ० प्र०)

अवैतनिक सहायक सम्पादक
महेशचन्द्र मीतल
सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक
श्रीमती सुधा मीतल

ग्राहक संख्या—1769,

श्रीमान Satyanarain.
H. No - 1-8-2131, Peedurghost Road
Secunderabad

मुद्रक : श्रीमती सुधा मीतल, दातादयाल प्रिंटर्स, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।